www.ijcrt.org © 2026 IJCRT | Volume 14, Issue 7 July 2026 | ISSN: 2320-2882

IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कथक की अभिनय-शिक्षा के शास्त्रीय आधार : आचार्य शारदातनय विरचित भावप्रकाशन के विशेष संदर्भ में

राजश्रीबा सोढ़ा

शोध निर्देशक : प्रशांत कुमार दास

सार **(Abstract)**

भारतीय शास्त्रीय नृत्य परम्परा में कथक अपनी विशिष्ट कथात्मकता, भावाभिव्यक्ति तथा सूक्ष्म अभिनय-शैली के कारण अन्य नृत्य-शैलियों से विशिष्ट स्थान रखता है। वर्तमान समय में कथक शिक्षण में लय, तत्कार, चक्कर तथा नृत्त-पक्ष पर अपेक्षाकृत अधिक बल दिया जाता है, जबकि अभिनय-प्रशिक्षण के शास्त्रीय आधारों का व्यवस्थित अध्ययन सीमित दिखाई देता है। परिणामस्वरूप अनेक शिक्षण संस्थानों में अभिनय का प्रशिक्षण व्यक्तिगत अनुभव अथवा गुरु-परम्परा तक सीमित रह जाता है और उसके पीछे निहित शास्त्रीय आधारों पर अपेक्षित विमर्श नहीं हो पाता।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य आचार्य शारदातनय विरचित भावप्रकाशन के आलोक में कथक की अभिनय-शिक्षा के शास्त्रीय आधारों का पुनर्मूल्यांकन करना है। अध्ययन में ग्रन्थ का पाठालोचन, भारतीय नाट्यशास्त्रीय परम्परा, कथक की मंचीय परम्परा तथा समकालीन प्रदर्शन-अध्ययन की अवधारणाओं का उपयोग किया गया है। विशेष रूप से यह परीक्षण किया गया है कि भावप्रकाशन में प्रतिपादित भाव, अनुभाव, दृष्टि, अभिनय, कलाकार की मानसिक तैयारी तथा प्रस्तुति-संरचना सम्बन्धी सिद्धान्त आधुनिक कथक प्रशिक्षण में किस प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भावप्रकाशन केवल मध्यकालीन संस्कृत नाट्यग्रन्थ नहीं है, बल्कि कथक की अभिनय-शिक्षा के लिए एक सशक्त सैद्धान्तिक आधार भी प्रदान करता है। यदि इसके सिद्धान्तों को समकालीन पाठ्यक्रम, अभ्यास-पद्धति तथा मंचीय प्रशिक्षण में समाहित किया जाए तो कथक में भावाभिव्यक्ति, चरित्र-निर्माण तथा सम्प्रेषणीयता को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन भारतीय ज्ञान परम्परा तथा कथक शिक्षण के मध्य एक सेतु स्थापित करने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द: कथक, अभिनय, भावप्रकाशन, शारदातनय, अभिनय-शिक्षा, भारतीय ज्ञान परम्परा, नृत्य शिक्षण, भावाभिव्यक्ति।

1. भूमिका

भारतीय शास्त्रीय नृत्य-परम्परा का विकास केवल प्रस्तुति-कला का इतिहास नहीं है, बल्कि ज्ञान, साधना, आध्यात्मिकता तथा सांस्कृतिक निरन्तरता का इतिहास भी है। प्रत्येक शास्त्रीय नृत्य-शैली की अपनी विशिष्ट तकनीक, सौन्दर्य-दृष्टि और शिक्षण-पद्धति होती है। कथक भी इसी परम्परा का एक सशक्त अंग है, जिसकी पहचान केवल उसके नृत्त-पक्ष से नहीं, बल्कि उसकी सशक्त अभिनय-परम्परा से भी होती है। कथा-वाचन की परम्परा से विकसित होने के कारण कथक का मूल स्वभाव संवादात्मक (communicative), व्याख्यात्मक (interpretative) तथा भावप्रधान रहा है। इसलिए कथक में अभिनय केवल एक सहायक पक्ष नहीं, बल्कि सम्पूर्ण प्रस्तुति की आत्मा है।

समकालीन समय में कथक की लोकप्रियता निरन्तर बढ़ी है। विश्वविद्यालयों, संगीत एवं नृत्य महाविद्यालयों, निजी अकादमियों तथा ऑनलाइन माध्यमों से कथक का शिक्षण व्यापक स्तर पर हो रहा है। किन्तु इस विस्तार के साथ एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न भी सामने आया है—क्या वर्तमान कथक शिक्षण में अभिनय का प्रशिक्षण उसके शास्त्रीय आधारों के अनुरूप दिया जा रहा है?

व्यावहारिक स्तर पर देखा जाए तो अधिकांश संस्थानों में शिक्षण का प्रारम्भ तत्कार, तोड़े, टुकड़े, परन, आमद, तिहाई, चक्कर तथा लयबद्ध संरचनाओं से होता है। अभिनय का प्रशिक्षण सामान्यतः पाठ्यक्रम के अंतिम चरणों में सीमित समय के लिए दिया जाता है। अनेक विद्यार्थी वर्षों तक कथक सीखने के पश्चात भी यह स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाते कि भाव की आन्तरिक तैयारी क्या है, चरित्र-निर्माण किस प्रकार किया जाता है, दृष्टि-विन्यास की मनोवैज्ञानिक भूमिका क्या है अथवा अभिनय केवल मुखमुद्राओं का प्रदर्शन नहीं, बल्कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति क्यों है। यह स्थिति इस बात की ओर संकेत करती है कि कथक शिक्षण में अभिनय के शास्त्रीय आधारों की पुनर्समीक्षा आवश्यक है।

यहीं भावप्रकाशन की प्रासंगिकता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती है। आचार्य शारदातनय का यह ग्रन्थ अभिनय को केवल बाह्य अभिव्यक्ति के रूप में नहीं देखता, बल्कि कलाकार की मानसिक अवस्था, भावोत्पत्ति, अनुभाव, दृष्टि, शरीर, वाणी तथा प्रस्तुति के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ आधुनिक कथक शिक्षण के लिए एक महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक स्रोत सिद्ध हो सकता है।

वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भी भारतीय ज्ञान प्रणाली (Indian Knowledge Systems) को पाठ्यक्रमों में समाहित करने पर विशेष बल दिया जा रहा है। संगीत और नृत्य जैसे प्रदर्शनकारी विषयों में यह अपेक्षा और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि इनकी परम्परा मूलतः शास्त्रीय ग्रन्थों, गुरु-शिष्य परम्परा तथा व्यवहारिक साधना पर आधारित रही है। इसके बावजूद कथक शिक्षण में भावप्रकाशन जैसे ग्रन्थों का व्यवस्थित उपयोग अपेक्षाकृत सीमित दिखाई देता है। अधिकांश पाठ्यक्रम नाट्यशास्त्र का संक्षिप्त परिचय तो देते हैं, किन्तु उत्तरवर्ती ग्रन्थों की शिक्षण-संभावनाओं पर पर्याप्त चर्चा नहीं करते। यही इस शोध का प्रमुख आधार है।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भावप्रकाशन की सम्पूर्ण व्याख्या करना नहीं है, बल्कि यह परीक्षण करना है कि इस ग्रन्थ में प्रतिपादित अभिनय-सिद्धान्त कथक की समकालीन शिक्षण-पद्धति को किस प्रकार समृद्ध कर सकते हैं। यह अध्ययन इस मान्यता पर आधारित है कि शास्त्रीय ग्रन्थ केवल ऐतिहासिक दस्तावेज़ नहीं होते, बल्कि वे जीवित परम्पराओं के विकास के लिए वैचारिक आधार भी प्रदान करते हैं। अतः यदि भावप्रकाशन के सिद्धान्तों को कथक की व्यवहारिक शिक्षा के साथ जोड़ा जाए तो अभिनय-प्रशिक्षण अधिक क्रमबद्ध, वैज्ञानिक तथा शास्त्रसम्मत बनाया जा सकता है।

2. शोध के उद्देश्य

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. कथक की अभिनय-शिक्षा के शास्त्रीय आधारों का अध्ययन करना।
2. भावप्रकाशन में प्रतिपादित अभिनय-सिद्धान्तों का कथक के संदर्भ में विश्लेषण करना।
3. कथक के वर्तमान शिक्षण-पद्धति में अभिनय-प्रशिक्षण की चुनौतियों का परीक्षण करना।
4. भावप्रकाशन के आधार पर कथक के लिए एक शास्त्रसम्मत अभिनय-प्रशिक्षण मॉडल प्रस्तावित करना।
5. भारतीय ज्ञान परम्परा और आधुनिक कथक शिक्षण के मध्य सम्बन्ध स्थापित करना।

3. साहित्य समीक्षा **(Review of Literature)**

भारतीय शास्त्रीय नृत्य, विशेषतः कथक, पर उपलब्ध साहित्य का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि शोध का अधिकांश भाग इतिहास, घरानों, नृत्य-तकनीक, ताल-पक्ष अथवा प्रमुख आचार्यों के योगदान पर केन्द्रित रहा है। अभिनय, विशेषकर उसकी शिक्षण-पद्धति (Pedagogy), पर अपेक्षाकृत कम व्यवस्थित अध्ययन उपलब्ध है। यही स्थिति भावप्रकाशन जैसे उत्तर-मध्यकालीन संस्कृत ग्रन्थों के संदर्भ में भी दिखाई देती है। यद्यपि इस ग्रन्थ को भारतीय नाट्यशास्त्रीय परम्परा का महत्त्वपूर्ण स्रोत माना जाता है, तथापि कथक की व्यवहारिक शिक्षण-पद्धति के संदर्भ में इसका विश्लेषण अभी भी सीमित है।

3.1 भावप्रकाशन पर उपलब्ध अध्ययन

भावप्रकाशन पर उपलब्ध प्रमुख कार्यों का स्वरूप मुख्यतः ग्रन्थ-सम्पादन, संस्कृत टीका, पाठ-विश्लेषण तथा रस एवं भाव सम्बन्धी सिद्धान्तों की व्याख्या तक सीमित रहा है। अधिकांश विद्वानों ने इसे भरतमुनि के नाट्यशास्त्र की उत्तरवर्ती कड़ी के रूप में देखा है और इसकी चर्चा प्रायः रस, भाव, नायक-नायिका, ताण्डव-लास्य अथवा अभिनय के सिद्धान्तों तक सीमित रही है। इसके परिणामस्वरूप यह प्रश्न लगभग अनुत्तरित रह गया कि इस ग्रन्थ की अवधारणाएँ समकालीन भारतीय शास्त्रीय नृत्य, विशेषतः कथक, की शिक्षण-प्रक्रिया को किस प्रकार दिशा प्रदान कर सकती हैं।

उपलब्ध शोधों में भावप्रकाशन की ऐतिहासिक एवं दार्शनिक व्याख्या तो मिलती है, किन्तु कलाकार की प्रशिक्षण-प्रक्रिया, भावाभ्यास, दृष्टि-अभ्यास, चरित्र-निर्माण तथा मंचीय तैयारी जैसे पक्षों का व्यवस्थित विश्लेषण विरल है। यही कारण है कि यह शोध भावप्रकाशन को केवल एक ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थ न मानकर कथक की अभिनय-शिक्षा के लिए एक व्यावहारिक सैद्धान्तिक आधार के रूप में पुनर्परिभाषित करने का प्रयास करता है।

3.2 कथक पर उपलब्ध शोध

कथक सम्बन्धी शोध-साहित्य का विस्तार पिछले तीन दशकों में उल्लेखनीय रूप से हुआ है। शोधगंगा (Shodhganga/INFLIBNET) में उपलब्ध अनेक शोध-प्रबन्ध कथक के इतिहास, ताल-पक्ष, अप्रचलित तालों, नृत्य-संरचना तथा कलाकारों के योगदान पर केन्द्रित हैं। उदाहरणस्वरूप, **"Indian Classical Dance Kathak: A Study"** तथा **"Importance of Non-popular (Aprachalit) Taals in Classical Dance – Kathak: A Study"** जैसे शोध यह दर्शाते हैं कि अकादमिक जगत में कथक के तकनीकी एवं संरचनात्मक पक्षों पर पर्याप्त कार्य हुआ है।

इन अध्ययनों का महत्त्व इस तथ्य में है कि इन्होंने कथक को केवल मंचीय कला न मानकर एक व्यवस्थित शैक्षणिक अनुशासन के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। तथापि इनका प्रमुख फोकस नृत्य-व्याकरण, ताल-विन्यास अथवा ऐतिहासिक विकास पर है। अभिनय-प्रशिक्षण की चरणबद्ध पद्धति तथा उसके शास्त्रीय आधारों पर अपेक्षित गहराई से विचार नहीं किया गया।

3.3 कथक शिक्षण एवं अभिनय पर समकालीन विमर्श

समकालीन शोध यह संकेत देते हैं कि कथक की शिक्षा पारम्परिक गुरु-शिष्य परम्परा से विकसित होकर विश्वविद्यालयों और औपचारिक पाठ्यक्रमों तक पहुँची है। इस परिवर्तन ने शिक्षण को अधिक संरचित बनाया, किन्तु अभिनय जैसे अनुभवपरक (experiential) पक्ष के शिक्षण के सामने नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत की हैं। हाल के अध्ययनों में यह रेखांकित किया गया है कि कथक की पारम्परिक शिक्षण-पद्धति केवल तकनीकी दक्षता नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा भावात्मक परिपक्वता का भी विकास करती है।

इसी प्रकार उच्च शिक्षा में अभिनय के शिक्षण पर हुए शोध यह संकेत करते हैं कि अभिनय को केवल चेहरे के भावों का अभ्यास मानना पर्याप्त नहीं है। विद्यार्थियों को चरित्र की आन्तरिक मनःस्थिति, अनुभव, स्मृति और अभिव्यक्ति की बहुस्तरीय प्रक्रिया से भी परिचित कराना आवश्यक है। यह दृष्टिकोण भावप्रकाशन की उन अवधारणाओं से मेल खाता है जिनमें अभिनय को मन, बुद्धि, शरीर और वाणी की संयुक्त क्रिया माना गया है।

3.4 भारतीय नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ और कथक

कथक के अधिकांश विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों में नाट्यशास्त्र तथा अभिनयदर्पण का उल्लेख मिलता है, किन्तु भावप्रकाशन का अध्ययन प्रायः सीमित रहता है। परिणामस्वरूप विद्यार्थियों का परिचय अभिनय के मूल सिद्धान्तों से तो होता है, परन्तु उत्तरवर्ती ग्रन्थों द्वारा प्रस्तुत सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहारिक दृष्टि उनसे प्रायः छूट जाती है।

यह स्थिति इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि कथक में प्रस्तुत होने वाले वन्दना, ठाट, गत-निकास, गत-भाव, पद-अभिनय, कवित्त, भजन तथा नृत्य-नाटिका जैसे पक्ष केवल तकनीकी कौशल से प्रभावशाली नहीं बनते; इनके लिए कलाकार की आन्तरिक भाव-संरचना और सम्प्रेषणीयता अनिवार्य होती है। भावप्रकाशन इसी क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत करता है।

3.5 शोध-अंतराल (Research Gap)

उपलब्ध साहित्य के आलोचनात्मक अध्ययन से निम्नलिखित शोध-अंतराल स्पष्ट होते हैं—

1. भावप्रकाशन पर उपलब्ध अधिकांश अध्ययन ग्रन्थ-केंद्रित हैं; कथक-केंद्रित नहीं।
2. कथक पर उपलब्ध अधिकांश शोध नृत्य-तकनीक, इतिहास, ताल अथवा कलाकारों पर केन्द्रित हैं; अभिनय-शिक्षा पर अपेक्षाकृत कम कार्य हुआ है।
3. भावप्रकाशन के सिद्धान्तों को कथक के वर्तमान पाठ्यक्रम, अभ्यास-पद्धति तथा मंचीय प्रशिक्षण से जोड़ने का प्रयास लगभग अनुपस्थित है।
4. भारतीय ज्ञान प्रणाली (IKS) के परिप्रेक्ष्य में कथक शिक्षण और संस्कृत नाट्यग्रन्थों के सम्बन्ध पर सीमित अकादमिक विमर्श उपलब्ध है।
5. अभिनय-प्रशिक्षण को चरणबद्ध शिक्षण मॉडल के रूप में विकसित करने की दिशा में भावप्रकाशन का उपयोग अभी तक व्यवस्थित रूप से नहीं किया गया है।

इन्हीं शोध-अंतरालों के आधार पर प्रस्तुत अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि भावप्रकाशन को केवल ऐतिहासिक ग्रन्थ के रूप में नहीं, बल्कि कथक की अभिनय-शिक्षा के लिए एक जीवित शास्त्रीय स्रोत के रूप में पुनर्पाठ किया जाना चाहिए। इस अध्ययन की मौलिकता इसी तथ्य में निहित है कि यह ग्रन्थ की अवधारणाओं को प्रत्यक्ष रूप से कथक की समकालीन शिक्षण-पद्धति, अभ्यास-विधि तथा मंचीय प्रस्तुति से जोड़कर देखता है, न कि केवल उनके दार्शनिक अथवा पाठालोचनात्मक विश्लेषण तक सीमित रहता है।

4. कथक की अभिनय-शिक्षा : भावप्रकाशन के आलोक में एक सैद्धान्तिक पुनर्पाठ

कथक की पहचान प्रायः उसके नृत्त-पक्ष—तत्कार, चक्कर, परन, आमद, टुकड़े तथा लयकारी—से की जाती है, किन्तु भारतीय नृत्य-दर्शन की दृष्टि से कथक की वास्तविक विशिष्टता उसके अभिनय में निहित है। 'कथक' शब्द स्वयं 'कथा' से व्युत्पन्न माना जाता है, जिसका तात्पर्य कथा का प्रस्तुतीकरण है। कथा का सम्प्रेषण केवल पदचालन या हस्तमुद्राओं से सम्भव नहीं होता; उसके लिए भाव, दृष्टि, देह-भाषा, मानसिक एकाग्रता तथा दर्शक के साथ भावात्मक संवाद आवश्यक होता है। इसीलिए कथक की शिक्षण-पद्धति में अभिनय को तकनीकी प्रशिक्षण के समान ही महत्त्व दिया जाना चाहिए।

दुर्भाग्यवश वर्तमान समय में अनेक संस्थानों में अभिनय का शिक्षण नृत्य के उच्च स्तर पर आरम्भ होता है। विद्यार्थी वर्षों तक तत्कार, तोड़े, टुकड़े और चक्कर का अभ्यास करते हैं, किन्तु अभिनय के मूलभूत सिद्धान्तों का व्यवस्थित परिचय उन्हें बहुत बाद में प्राप्त होता है। परिणामस्वरूप उनके लिए अभिनय प्रायः केवल मुस्कान, नेत्र-संचालन अथवा मुखाभिनय तक सीमित रह जाता है। यह स्थिति कथक की मूल प्रकृति के अनुरूप नहीं कही जा सकती। भावप्रकाशन इस संदर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करता है, क्योंकि शारदातनय अभिनय को बाह्य प्रदर्शन नहीं, बल्कि आन्तरिक भाव-साधना का परिणाम मानते हैं।

4.1 अभिनय : तकनीक नहीं, साधना

भारतीय नाट्यशास्त्रीय परम्परा में अभिनय का उद्देश्य केवल चरित्र का अनुकरण (Imitation) नहीं, बल्कि भाव का सम्प्रेषण (Communication of Emotion) है। शारदातनय के अनुसार कलाकार का प्रत्येक आङ्गिक, वाचिक अथवा सात्त्विक व्यवहार उसके अन्तर्मन में स्थित भाव से संचालित होता है। इस सिद्धान्त का कथक की शिक्षण-पद्धति पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

यदि विद्यार्थी को प्रारम्भ से ही यह समझाया जाए कि प्रत्येक गति का एक भावात्मक कारण है, तो उसकी प्रस्तुति यांत्रिक न होकर स्वाभाविक बनेगी। उदाहरणार्थ, केवल हाथ उठाने की क्रिया और किसी पात्र का आह्वान करते हुए हाथ उठाने की क्रिया तकनीकी रूप से समान हो सकती है, किन्तु दोनों की भाव-संरचना भिन्न होती है। इसी प्रकार एक साधारण दृष्टि और किसी प्रिय पात्र की प्रतीक्षा करती दृष्टि में अन्तर केवल नेत्रों की दिशा का नहीं, बल्कि मनःस्थिति का होता है।

इस प्रकार भावप्रकाशन कथक शिक्षक को यह संकेत देता है कि अभिनय का प्रशिक्षण देह से नहीं, मन से प्रारम्भ होना चाहिए।

4.2 भावाभ्यास की क्रमिक प्रक्रिया

कथक में अभिनय का अभ्यास प्रायः सीधे ठुमरी, पद या भजन के माध्यम से कराया जाता है। विद्यार्थी गीत के शब्दों का अर्थ समझते हैं और उसके अनुरूप मुखाभिनय करने का प्रयास करते हैं। किन्तु यह पद्धति तभी प्रभावी होती है जब विद्यार्थी भाव के स्रोत को समझता हो।

भावप्रकाशन के आलोक में अभिनय-प्रशिक्षण को निम्नलिखित चरणों में व्यवस्थित किया जा सकता है—

प्रथम चरण – भाव की पहचान

विद्यार्थी को यह समझाया जाए कि किसी भी प्रस्तुति में मूल भाव क्या है। उदाहरणतः वात्सल्य, भक्ति, करुणा, श्रृंगार अथवा वीरता।

द्वितीय चरण – भाव की आन्तरिक अनुभूति

केवल भाव का नाम जानना पर्याप्त नहीं है। विद्यार्थी को उस भाव की मनोवैज्ञानिक अवस्था, उसकी गति, उसकी शारीरिक प्रतिक्रिया तथा उसकी मानसिक लय को समझना चाहिए।

तृतीय चरण – देह में भाव का संचार

जब भाव भीतर स्पष्ट हो जाता है, तभी उसका प्रभाव दृष्टि, मुखमुद्रा, ग्रीवा, हस्त, कटि तथा सम्पूर्ण देह पर स्वाभाविक रूप से दिखाई देता है।

चतुर्थ चरण – दर्शक तक सम्प्रेषण

अन्तिम लक्ष्य केवल अभिनय करना नहीं, बल्कि दर्शक तक उस भाव को सम्प्रेषित करना है। यही अभिनय की सफलता है।

यह क्रम शारदातनय की भाव-प्रधान दृष्टि से पूर्णतः संगत है और कथक की शिक्षण-पद्धति को अधिक वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान कर सकता है।

4.3 कथक में दृष्टि-अभ्यास का शास्त्रीय आधार

कथक की प्रस्तुति में दृष्टि (Eye Focus) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मंच पर कलाकार की दृष्टि ही दर्शक का ध्यान निर्देशित करती है। यदि दृष्टि अस्थिर है, तो प्रस्तुति का सम्प्रेषण भी प्रभावित होता है।

भावप्रकाशन में दृष्टि केवल नेत्रों की गति नहीं है; वह भाव की वाहक है। यही सिद्धान्त कथक में भी लागू होता है। उदाहरण के लिए—

- वन्दना में दृष्टि का केन्द्र देवत्व है।
- गत-निकास में दृष्टि कल्पित दृश्य का निर्माण करती है।
- पद-अभिनय में दृष्टि संवाद का माध्यम बनती है।
- भजन में दृष्टि भक्ति की अन्तर्मुखी अवस्था व्यक्त करती है।
- कवित्त में दृष्टि नाटकीय प्रभाव को तीव्र करती है।

इस प्रकार कथक शिक्षक को दृष्टि-अभ्यास को केवल तकनीकी अभ्यास न मानकर भावाभिव्यक्ति के अभ्यास के रूप में विकसित करना चाहिए।

4.4 गत-निकास और अभिनय

गत-निकास को सामान्यतः चलने की शैली अथवा पात्र-प्रवेश के रूप में पढ़ाया जाता है। किन्तु वास्तव में प्रत्येक गत किसी चरित्र, परिस्थिति अथवा मनःस्थिति का दृश्य रूप है।

यदि विद्यार्थी केवल पगचालन सीखता है तो वह गति का बाह्य रूप ग्रहण करता है। यदि वह पात्र की मानसिक अवस्था भी समझता है, तो वही गत अभिनय का माध्यम बन जाती है।

उदाहरणार्थ, राधा की गत, यशोदा की गत, गोपी की गत अथवा दूत की गत केवल चाल में अन्तर नहीं रखतीं; प्रत्येक की भाव-भूमि अलग होती है। भावप्रकाशन की दृष्टि से देखा जाए तो यह अन्तर मूलतः भाव के कारण उत्पन्न होता है, न कि केवल शारीरिक विन्यास के कारण।

अतः कथक प्रशिक्षण में गत-निकास का अभ्यास चरित्र-अध्ययन के साथ जोड़ा जाना चाहिए।

4.5 पद-अभिनय **:** शब्द से अनुभूति तक

कथक का पद-अभिनय भारतीय काव्य, संगीत और नृत्य का संगम है। किन्तु कई बार विद्यार्थी पद का अर्थ तो समझ लेते हैं, पर उसके भावात्मक स्तर तक नहीं पहुँच पाते।

उदाहरण के लिए यदि कोई पद विरह का है, तो केवल उदासी का अभिनय पर्याप्त नहीं है। कलाकार को यह भी समझना होगा कि—

- विरह किस कारण उत्पन्न हुआ?
- पात्र की मनःस्थिति क्या है?
- आशा और निराशा का अनुपात क्या है?
- स्मृति की भूमिका क्या है?
- प्रतीक्षा कितनी लम्बी है?

यही सूक्ष्मताएँ अभिनय को प्रभावशाली बनाती हैं।

भावप्रकाशन की भाव-प्रधान दृष्टि पद-अभिनय को इसी स्तर पर समझने की प्रेरणा देती है।

4.6 अभ्यास-पद्धति का पुनर्गठन

यदि भावप्रकाशन को कथक शिक्षण में व्यवहारिक रूप से लागू किया जाए तो अभ्यास-पद्धति में निम्न परिवर्तन सम्भव हैं—

- प्रत्येक तकनीकी अभ्यास के साथ भावात्मक उद्देश्य स्पष्ट किया जाए।
- दर्पण के समक्ष केवल मुखाभिनय का अभ्यास न कराकर परिस्थितिजन्य अभिनय कराया जाए।
- विद्यार्थियों को चरित्र-विश्लेषण की लिखित अभ्यास-पुस्तिका तैयार करने के लिए प्रेरित किया जाए।
- प्रत्येक पद या कवित्त के अभ्यास से पूर्व उसके सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं भावात्मक सन्दर्भ की चर्चा की जाए।
- मंच-अभ्यास में दर्शक के साथ सम्प्रेषण को प्रशिक्षण का अनिवार्य भाग बनाया जाए।

इस प्रकार अभिनय केवल प्रस्तुति का भाग न रहकर सम्पूर्ण शिक्षण-प्रक्रिया का केन्द्र बन सकता है।

4.7 आलोचनात्मक टिप्पणी

यह स्वीकार करना भी आवश्यक है कि भावप्रकाशन का प्रत्यक्ष उद्देश्य कथक के लिए शिक्षण-पुस्तक तैयार करना नहीं था। इसलिए उसके सिद्धान्तों को यथावत् वर्तमान पाठ्यक्रम पर आरोपित करना उचित नहीं होगा। आवश्यकता इस बात की है कि उसके मूल सिद्धान्तों—भाव की प्रधानता, अभिनय की आन्तरिकता, दृष्टि की भूमिका तथा कलाकार की मानसिक तैयारी—को समकालीन कथक शिक्षण की आवश्यकताओं के अनुरूप पुनर्व्याख्यायित किया जाए।

यही दृष्टिकोण भारतीय ज्ञान परम्परा के पुनर्पाठ का भी आधार है। शास्त्र का उद्देश्य केवल अतीत का संरक्षण नहीं, बल्कि वर्तमान को दिशा प्रदान करना है। भावप्रकाशन इसी अर्थ में कथक की अभिनय-शिक्षा के लिए आज भी एक जीवित सैद्धान्तिक स्रोत के रूप में देखा जा सकता है।

5. कथक की मंचीय प्रस्तुति एवं प्रदर्शन-शिक्षा **:** भावप्रकाशन के आलोक में पुनर्व्याख्या

कथक मूलतः प्रदर्शन (Performance) की कला है। उसकी सम्पूर्ण संरचना दर्शक के समक्ष घटित होने वाली एक जीवंत प्रक्रिया पर आधारित है। कलाकार, संगीत, लय, साहित्य, मंच तथा दर्शक—ये सभी मिलकर एक ऐसी सौन्दर्यात्मक अनुभूति का निर्माण करते हैं जो केवल तकनीकी कौशल से सम्भव नहीं होती। इसी कारण कथक की प्रस्तुति को केवल नृत्य-क्रम

(Dance Sequence) के रूप में नहीं, बल्कि एक सुविचारित प्रदर्शन-प्रक्रिया (Performance Process) के रूप में समझना आवश्यक है।

भावप्रकाशन का महत्त्व इसी बिन्दु पर विशेष रूप से सामने आता है। यद्यपि ग्रन्थ कथक के उद्भव से कई शताब्दियों पूर्व का है, तथापि उसमें प्रतिपादित अभिनय, प्रस्तुति, पूर्वतैयारी, कलाकार की मानसिक अवस्था तथा भाव-संप्रेषण के सिद्धान्त आज भी कथक की मंचीय संरचना को समझने में उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस दृष्टि से भावप्रकाशन को केवल ऐतिहासिक स्रोत न मानकर एक प्रदर्शन-दर्शन **(Performance Philosophy)** के रूप में पढ़ा जाना चाहिए।

5.1 मंच पर प्रवेश से पूर्व कलाकार की मानसिक तैयारी

वर्तमान कथक प्रशिक्षण में मंच पर जाने से पूर्व का अभ्यास प्रायः तकनीकी तैयारी तक सीमित रहता है। कलाकार रियाज़ करता है, वेशभूषा धारण करता है, वादकों से संवाद स्थापित करता है तथा प्रस्तुति के क्रम का पुनरावलोकन करता है। किन्तु शास्त्रीय दृष्टि से यह तैयारी पर्याप्त नहीं है।

भावप्रकाशन के अनुसार अभिनय की सफलता का आधार कलाकार का अन्तर्मन है। यदि कलाकार की चेतना प्रस्तुति के अनुरूप एकाग्र नहीं है, तो बाह्य तकनीकी दक्षता भी सम्प्रेषण को पूर्ण नहीं बना सकती। इससे यह संकेत मिलता है कि कथक प्रशिक्षण में मंच पर जाने से पूर्व मानसिक एकाग्रता, भाव-स्मरण **(Emotional Recall)** तथा चरित्र-तैयारी को भी अभ्यास का अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए।

उदाहरण के लिए, यदि कलाकार सूरदास का पद प्रस्तुत करने जा रहा है, तो केवल बोलों का स्मरण पर्याप्त नहीं है। उसे उस पद की भावभूमि, भक्त और भगवान के सम्बन्ध, साहित्यिक अर्थ तथा पात्र की मानसिक अवस्था का भी स्मरण करना चाहिए। इस प्रकार प्रस्तुति एक तकनीकी क्रम न रहकर भावात्मक अनुभव बन जाती है।

5.2 वन्दना **:** केवल आरम्भ नहीं, भाव-स्थापना

आधुनिक कथक प्रस्तुति का आरम्भ प्रायः वन्दना से होता है। सामान्यतः इसे मंचीय परम्परा का एक अनिवार्य प्रारम्भिक अंग माना जाता है, किन्तु भावप्रकाशन की दृष्टि से वन्दना का उद्देश्य इससे कहीं अधिक व्यापक है।

वन्दना कलाकार की मानसिक अवस्था को लौकिक से अलौकिक की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया है। यह कलाकार को उसके व्यक्तिगत व्यक्तित्व से हटाकर प्रस्तुति के सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक आयाम से जोड़ती है। इस दृष्टि से वन्दना केवल देव-स्तुति नहीं, बल्कि प्रस्तुति के भावलोक में प्रवेश का माध्यम है।

कथक शिक्षण में यदि विद्यार्थियों को वन्दना के केवल हस्त-विन्यास न सिखाकर उसके दार्शनिक एवं भावात्मक अर्थ भी समझाए जाएँ, तो उनकी प्रस्तुति अधिक प्रामाणिक एवं सम्प्रेषणीय बन सकती है।

5.3 ठाट **:** व्यक्तित्व का दृश्य-विन्यास

ठाट को प्रायः नृत्य का स्थिर एवं सौन्दर्यपूर्ण आरम्भ माना जाता है। किन्तु इसकी वास्तविक भूमिका केवल शारीरिक मुद्रा तक सीमित नहीं है।

ठाट कलाकार के व्यक्तित्व की प्रथम दृश्य घोषणा है। इसी क्षण दर्शक कलाकार की देह-भाषा, संतुलन, दृष्टि, आत्मविश्वास तथा भाव-संयम का अनुभव करता है। यदि ठाट केवल शारीरिक विन्यास बनकर रह जाए तो उसका प्रभाव सीमित हो जाता है।

भावप्रकाशन की दृष्टि से ठाट को भाव की स्थापनात्मक अवस्था (Preparatory Emotional State) के रूप में समझा जा सकता है। इस अवस्था में कलाकार न तो पूर्णतः स्थिर होता है और न ही पूर्णतः गतिशील; वह भाव और गति के मध्य स्थित उस सूक्ष्म क्षण का निर्माण करता है जहाँ से सम्पूर्ण प्रस्तुति जन्म लेती है।

इस आधार पर कथक के विद्यार्थियों को ठाट का अभ्यास केवल दर्पण के सामने न कराकर विभिन्न भावस्थितियों के साथ कराया जाना चाहिए।

5.4 गत-भाव **:** चरित्र-निर्माण की प्रयोगशाला

गत-भाव कथक की वह विधा है जिसमें कलाकार सीमित गतियों के माध्यम से सम्पूर्ण दृश्य का निर्माण करता है। इसमें न तो विस्तृत मंच-सज्जा होती है और न ही वास्तविक पात्र; सम्पूर्ण दृश्य कलाकार की कल्पना और अभिनय से निर्मित होता है।

यही कारण है कि गत-भाव अभिनय-प्रशिक्षण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

भावप्रकाशन के अनुसार कलाकार को बाह्य क्रिया से पूर्व आन्तरिक भाव का निर्माण करना चाहिए। यदि यही सिद्धान्त गत-भाव पर लागू किया जाए, तो स्पष्ट होता है कि किसी भी गत का अभ्यास उसके मनोवैज्ञानिक आधार के बिना अधूरा है।

उदाहरणार्थ, यदि विद्यार्थी "मटकी लेकर चलती गोपी" की गत प्रस्तुत कर रहा है, तो उसे केवल चलने की शैली नहीं सीखनी चाहिए। उसे यह भी समझना होगा—

- वह कहाँ जा रही है?
- उसकी आयु क्या है?
- उसका स्वभाव कैसा है?
- क्या वह अकेली है?
- क्या उसे किसी की प्रतीक्षा है?
- क्या वह प्रसन्न है या चिंतित?

जब तक इन प्रश्नों के उत्तर कलाकार के भीतर स्पष्ट नहीं होंगे, तब तक गत केवल चाल बनकर रह जाएगी; वह चरित्र नहीं बन पाएगी।

यही भावप्रकाशन का अभिनय-दर्शन है।

5.5 कवित्त और पद-अभिनय **:** शब्द का दृश्य-रूपान्तरण

कथक में कवित्त और पद-अभिनय केवल साहित्य की व्याख्या नहीं हैं; वे साहित्य को दृश्य अनुभव में रूपान्तरित करने की प्रक्रिया हैं। प्रत्येक शब्द, प्रत्येक उपमा और प्रत्येक भाव को कलाकार अपने शरीर, दृष्टि और गति के माध्यम से मूर्त रूप देता है।

भावप्रकाशन की दृष्टि से यह रूपान्तरण तभी प्रभावी होता है जब कलाकार पहले स्वयं उस भाव का अनुभव करे। यदि कवित्त में शिव का ताण्डव वर्णित है, तो कलाकार को केवल ताण्डव की गतियाँ नहीं, बल्कि शिव की ऊर्जा, गंभीरता और विश्व-नियामक शक्ति की अनुभूति भी करनी होगी। इसी प्रकार यदि भक्ति-पद प्रस्तुत किया जा रहा है, तो उसमें श्रद्धा, समर्पण और आन्तरिक शान्ति का अनुभव कलाकार के भीतर विकसित होना चाहिए।

इससे स्पष्ट होता है कि भावप्रकाशन कथक के साहित्यिक पक्ष को भी केवल अर्थ-बोध तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे भावानुभूति की प्रक्रिया से जोड़ता है।

5.6 मंचीय सम्प्रेषण **:** दर्शक के साथ संवाद

कथक की प्रस्तुति एकतरफा प्रदर्शन नहीं है। कलाकार और दर्शक के बीच निरन्तर भावात्मक संवाद चलता रहता है। कलाकार दर्शक की प्रतिक्रिया से ऊर्जा ग्रहण करता है और दर्शक कलाकार की अभिव्यक्ति से सौन्दर्यानुभूति प्राप्त करता है।

भावप्रकाशन की मूल भावना भी यही है कि अभिनय का उद्देश्य केवल प्रदर्शन नहीं, बल्कि सम्प्रेषण है। इस सिद्धान्त के आधार पर कथक शिक्षण में विद्यार्थियों को प्रारम्भ से ही छोटे समूहों के सामने प्रस्तुति देने का अभ्यास कराया जाना चाहिए। इससे उनमें मंचीय आत्मविश्वास, सम्प्रेषणीयता तथा भाव-नियन्त्रण का विकास होता है।

5.7 कथक प्रदर्शन के लिए एक शास्त्राधारित प्रशिक्षण मॉडल (प्रस्ताव)

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर कथक की अभिनय-शिक्षा हेतु निम्नलिखित सात-स्तरीय प्रशिक्षण मॉडल प्रस्तावित किया जा सकता है—

चरण	उद्देश्य	भावप्रकाशन से प्रेरित सिद्धान्त
1	साहित्य का अध्ययन	भाव की पहचान
2	भाव-विश्लेषण	आन्तरिक अनुभूति
3	चरित्र-निर्माण	मनोवैज्ञानिक तैयारी
4	दृष्टि एवं देह-अभ्यास	आङ्गिक अभिव्यक्ति
5	संगीत एवं लय के साथ अभ्यास	भाव और गति का समन्वय
6	मंचीय प्रस्तुति	सम्प्रेषण
7	आत्ममूल्यांकन	भाव की प्रामाणिकता

यह मॉडल विशेष रूप से विश्वविद्यालयों, संगीत महाविद्यालयों तथा कथक संस्थानों के लिए उपयोगी हो सकता है क्योंकि यह अभिनय-शिक्षा को केवल अनुभव-आधारित न रखकर एक क्रमबद्ध शास्त्रीय प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है।

6. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन का मूल उद्देश्य आचार्य शारदातनय विरचित भावप्रकाशन के आलोक में कथक की अभिनय-शिक्षा के शास्त्रीय आधारों का पुनर्मूल्यांकन करना था। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भावप्रकाशन केवल भारतीय नाट्यशास्त्रीय परम्परा का एक ऐतिहासिक संस्कृत ग्रन्थ नहीं है, बल्कि प्रदर्शनकारी कलाओं के सिद्धान्त, कलाकार की मानसिक तैयारी, भावाभिव्यक्ति तथा अभिनय-प्रशिक्षण की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध ग्रन्थ है। यद्यपि इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध कथक से नहीं है, तथापि इसमें प्रतिपादित सिद्धान्त कथक की अभिनय-परम्परा को समझने और व्यवस्थित करने के लिए अत्यन्त उपयोगी आधार प्रदान करते हैं।

वर्तमान कथक शिक्षण-पद्धति का विश्लेषण यह दर्शाता है कि अधिकांश संस्थानों में नृत्य के तकनीकी पक्ष—तत्कार, चक्कर, आमद, परन, तोड़े एवं लयकारी—को अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व दिया जाता है, जबकि अभिनय का प्रशिक्षण प्रायः पाठ्यक्रम के अंतिम चरणों तक सीमित रहता है। परिणामस्वरूप अनेक विद्यार्थी मंचीय प्रस्तुति में तकनीकी रूप से दक्ष होने के बावजूद भावाभिव्यक्ति, चरित्र-निर्माण तथा दर्शक के साथ प्रभावी सम्प्रेषण स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। यह स्थिति कथक की मूल कथात्मक एवं अभिनयप्रधान प्रकृति के अनुरूप नहीं कही जा सकती।

भावप्रकाशन का अध्ययन इस समस्या का एक सैद्धान्तिक समाधान प्रस्तुत करता है। शारदातनय अभिनय को बाह्य मुद्राओं का प्रदर्शन न मानकर कलाकार के अन्तर्मन, भाव, अनुभूति, दृष्टि, वाणी तथा शरीर की समन्वित प्रक्रिया के रूप में देखते हैं। इस दृष्टि से कथक में अभिनय का प्रशिक्षण केवल मुखाभिनय अथवा नेत्र-संचालन का अभ्यास न होकर एक क्रमिक साधना होना चाहिए, जिसमें साहित्य-बोध, भाव-विश्लेषण, चरित्र-निर्माण, मानसिक एकाग्रता तथा मंचीय सम्प्रेषण को समान महत्त्व दिया जाए।

प्रस्तुत शोध का एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि कथक की अनेक प्रमुख प्रस्तुतियाँ—जैसे वन्दना, ठाट, गत-निकास, गत-भाव, पद-अभिनय, कवित्त तथा भजन—यदि भावप्रकाशन की सैद्धान्तिक दृष्टि से पुनर्पाठित की जाएँ, तो उनकी शिक्षण-पद्धति अधिक क्रमबद्ध, वैज्ञानिक तथा शास्त्रसम्मत बनाई जा सकती है। विशेष रूप से भाव की क्रमिक साधना, दृष्टि-विन्यास, चरित्र की आन्तरिक तैयारी तथा प्रस्तुति की मनोवैज्ञानिक संरचना को कथक पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए।

यह अध्ययन भारतीय ज्ञान परम्परा (Indian Knowledge Systems) के वर्तमान शैक्षणिक विमर्श में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। नई शिक्षा नीति के पश्चात् भारतीय शास्त्रीय ग्रन्थों को समकालीन शिक्षण एवं शोध से जोड़ने की आवश्यकता पर विशेष बल दिया जा रहा है। भावप्रकाशन इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण स्रोत सिद्ध हो सकता है, क्योंकि यह सिद्धान्त और व्यवहार के मध्य एक सुदृढ़ सेतु स्थापित करता है। कथक की विश्वविद्यालयीय शिक्षा, शोध एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण में इस ग्रन्थ के चयनित सिद्धान्तों को समाविष्ट करने से अभिनय-शिक्षा की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार सम्भव है।

आलोचनात्मक दृष्टि से यह स्वीकार करना भी आवश्यक है कि भावप्रकाशन का रचनाकाल, सांस्कृतिक परिवेश तथा प्रस्तुति-परम्परा वर्तमान समय से भिन्न है। अतः इसके सिद्धान्तों को यथावत् आधुनिक कथक पर आरोपित करने के स्थान पर उनकी समकालीन पुनर्व्याख्या (Contemporary Interpretation) आवश्यक है। यही पुनर्व्याख्या भारतीय ज्ञान परम्परा को जीवंत बनाए रखने का सबसे प्रभावी माध्यम है।

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि कथक की अभिनय-शिक्षा के सुदृढ़ीकरण के लिए केवल तकनीकी अभ्यास पर्याप्त नहीं है। शास्त्रीय आधार, भाव-साधना, साहित्यिक संवेदनशीलता तथा कलाकार की मानसिक तैयारी को समान रूप से महत्त्व देना आवश्यक है। भावप्रकाशन इन सभी पक्षों को एक समन्वित दृष्टि प्रदान करता है। इसलिए भविष्य में कथक के पाठ्यक्रम-निर्माण, शिक्षक-प्रशिक्षण, अभिनय-अभ्यास, कोरियोग्राफी तथा प्रदर्शन-अध्ययन के क्षेत्र में इस ग्रन्थ पर आधारित विस्तृत अनुसंधान की व्यापक सम्भावनाएँ विद्यमान हैं।

संदर्भ सूची (APA 7th Edition)

1. Agrawal, M. M. (Ed.). (1983). *Śāradātanayaviracitaṃ Bhāvaprakāśanam* (Hindi commentary). Chaukhambha Surbharati Prakashan.
2. Bharata. (2003). *Nāṭyaśāstra* (2 vols., M. Ghosh, Trans.). Chowkhamba Sanskrit Series Office. (Original work composed c. 200 BCE–200 CE).
3. Chaturvedi, K. C. (2010). *Bharatiya Natyashastra ki Parampara*. Vidyanidhi Prakashan.
4. Dadhich, P. (2015). *Kathak Nritya Shiksha* (Vols. I–II). Bindu Prakashan.
5. Kapila Vatsyayan. (1974). *Indian Classical Dance*. Publications Division, Government of India.
6. Nandikeśvara. (1997). *Abhinayadarpaṇa* (M. Ghosh, Ed.). Firma KLM.
7. Ranjan, A. (2022). Indigenous knowledge in Kathak pedagogy and its relevance in higher education. *International Journal of Creative Research Thoughts, 10*(4), 542–551.
8. Śāradātanaya. (1968). *Bhāvaprakāśana of Śāradātanaya* (S. Yadugiri Yatiraja & K. S. Ramaswami Sastri, Eds.). Oriental Institute.
9. Śārṅgadeva. (1998). *Saṅgītaratnākara* (R. K. Shringy, Ed.). Motilal Banarsidass.
10. Sharma, M. (2018). *Kathak: Tradition, Performance and Pedagogy*. Rawat Publications.
11. Singh, M. (2019). *Indian Classical Dance Kathak: A Study* (Doctoral dissertation). Shodhganga, INFLIBNET Centre.
12. Sinha, R. (2021). *Importance of Non-popular (Aprachalit) Taals in Classical Dance – Kathak: A Study* (Doctoral dissertation). Shodhganga, INFLIBNET Centre.
13. Vatsyayan, K. (1983). *Classical Indian Dance in Literature and the Arts*. Sangeet Natak Akademi.
14. Viśvanātha Kavirāja. (2007). *Sāhityadarpaṇa*. Chaukhambha Sanskrit Series Office.